अकबर का धार्मिक दृष्टिकोण
(पारसी, ईसाई धर्म, जैन, सिक्ख धर्म के संदर्भ में)

डॉ. इन्द्रकला सिंह

अकबर भारत का ही नहीं, वरन् विश्व के सर्वोत्कृष्ट शासकों में एक था। वह मुगल साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक तथा संगठनकर्त्ता था। वह मुगल साम्राज्य के स्वर्णयुग का प्रतीक था। अकबर के राज्याभिषेक के समय भारत में राजनीतिक एकता का अभाव था। अकबर ने सन् 1575 में धार्मिक शास्त्रार्थ के लिये इबादतखाना बनवाया। अकबर ने मुगल साम्राज्य के विस्तार, सुदृढ़ीकरण, शान्ति एवं व्यवस्था के लिए अनेक उदारवादी नीतियों को अपनाया। अकबर ने देश में राष्ट्रीय एकता स्थापित करने के उद्देश्य से एक ऐसा धर्म चलाने का निश्चय किया, जिससे राष्ट्र का हित होता हो एवं हिन्दू तथा मुसलमान एक साथ मिलकर रह सकें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अकबर ने 1581 ई. में 'दीन–ए–इलाही' नाम से एक नवीन मत या धर्म अथवा संघ की स्थापना की। अकबर की उदारवादी नीति तैमुरिद राजनीति का एक हिस्सा माना जाता है। अकबर के वंश में जो राजनीति स्वरूप था वह एक धार्मिक सहिष्णुता का था। अकबर प्रदत्त धार्मिक स्वतंत्रता के कारण हिन्दुओं के व्रतों और त्योहारों में विशेष उत्सव होते थे। तीर्थस्थलों में अच्छे–अच्छे मंदिरों के निर्माण तथा मूर्तियों की प्राण–प्रतिष्ठा होने लगी थी। बौद्धों, पारसियों तथा ईसाइयों को भी अपने धर्म–प्रचार की पूरी आजादी थी। नवोद्भासित सिख–धर्म तथा नवागन्तुक ईसाई धर्म जन–मानस का सम्पर्क प्राप्त कर रहे थे। इस समय देश में रामोपासना, कृष्णोपासना तथा सूफी–साधना का बोलबाला था।